Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education

Vol. IV, Issue VII, July-2012, ISSN 2230-7540

REVIEW ARTICLE

पूर्वमध्यकालीन भारत में शिक्षा एवं शिक्षा केन्द्र

www.ignited.in

Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. IV, Issue VII, July-2012, ISSN 2230-7540

पूर्वमध्यकालीन भारत में शिक्षा एवं शिक्षा केन्द्र

Vandana

Research Scholar, Histroy Department, Singhania University, Jhunjhunu, Rajasthan, India

---

शिक्षा

प्राचीनकाल से ही भारतीय समाज में शिक्षा का प्रबन्धन योजनाबद्ध और सुनियोजित था। गुरु आश्रम में रहकर विद्याध्ययन किया जाता था। वेद, पुराण, धर्म, दर्शन, विज्ञान आदि सभी विषयों की शिक्षा सम्यक् रूप से विद्यार्थी को दी जाती थी। पूर्वमध्यकालीन भारतीय समाज में शिक्षा का साधारणतः यही सामान्य स्वरूप था। यद्यपि ऐतिहासिक कारणों से उसमें आन्तरिक भेद आ गए थे। यत्र–तत्र आंशिक परिवर्तन हो जाने पर भी उसका पारम्परिक स्वरूप पूर्ववत था।

विद्यारम्भ

विद्यारम्भ पाँच वर्ष की अवस्था से हो जाता था। पूर्वमध्ययुगीन लेखक अपरार्क[प] और देवणभट्ट[पप] ने मार्कण्डेयपुराण को उद्धृत करते हुए सन्तान के विद्यारम्भ की अवस्था पाँच वर्ष निर्देशित की है। संस्कार प्रकाश[पपप] और संस्कार रत्नमाला[पअ] में भी विद्या का आरम्भ उपनयन के पहले पाँच वर्ष की अवस्था से माना गया है। अलबीरूनी का ज्ञान इस सम्बन्ध में अद्यतन नहीं। उसने ब्रह्मचर्य आश्रम से ही विद्या का प्रारम्भ माना है।[अ]

चीनी यात्री श्वानच्वांग[अप] ने बच्चों की आरम्भिक शिक्षा 'सिद्धमचंग' से प्रारम्भ होना बताया है। 'सिद्धम' सफलता का द्योतक था। 'सिद्धम' की समाप्ति के पश्चात् सातवें वर्ष पंचविद्याओं का अध्ययन कराया जाता था। ये पंचविद्याएं थीं, (1) शब्दविद्या (जिसे व्याकरण भी कहा जाता था), (2) शिल्पविद्या (जिससे अनेक शिल्प और कला का ज्ञान प्राप्त होता था), (3) चिकित्सा विद्या, (4) हेतुविद्या (न्याय अथवा तर्क) और (5) आध्यात्म विद्या (दर्शनशास्त्र)। इत्सिंग[अपप]ने भी बालकों की प्रारम्भिक शिक्षा का प्रारम्भ 'सिद्धिरस्तु' नामक पुस्तक से माना है, जिसमें वर्णमाला, स्वर और व्यंजन का विनियोग था।

प्रारम्भिक शिक्षा में लेखन उपकरण

प्रारम्भिक शिक्षा में छात्र को लिखने के लिए काली पटिया और खड़िया दी जाती थी। वह लम्बवत् पटिया (तख्ती) पर बाएं से दाएं खड़िया से लिखने का अभ्यास करता था। अलबीरूनी लिखता है कि वे बच्चों के लिए विद्यालय में काली तख्ती प्रयोग में लाते हैं और उस पर लम्बाई की ओर से, न कि चौड़ाई की, बाएं से दाएं सफेद वस्तु से लिखते हैं।[अपपप]

आज भी भारतीय पाठशालाओं में, अनेकानेक नवीन लेखक उपकरणों के बावजूद, कालिख पुती हुई काठ की पटरी पर खड़िया (दुधिया) से लिखा जाता है। अलबीरूनी ने जिस सफेद वस्तु का निर्देश किया है वह निश्चय ही दुधिया ही रही होगी। आज भी बच्चों को पटरी की लम्बाई की ओर से बाएं से दाएं लिखने के लिए सभी पाठशालाओं में बताया जाता है।

गुरु आश्रय में विद्याध्ययन

प्राचीनकाल[पग] में गुरु के निकट रहकर तो छात्र विद्याध्ययन करते ही थे, पूर्वमध्यकाल में भी ऐसा ही प्रचलन था। इस आवास काल में वेद, स्मृति, आचार, धर्म, दर्शन आदि के अतिरिक्त शिल्प, कला, कारीगरी आदि की भी शिक्षा विद्यार्थियों को मिलती थी।[ग]

अलबीरूनी लिखता है कि छात्र का कर्त्तव्य ब्रह्मचर्य का पालन, भूमि को अपना बिछौना बनाना, वेद और उसके भाष्य का तथा ब्रह्मविद्या और धर्मशास्त्र का अध्ययन प्रारम्भ करना है। यह सब उसको एक गुरु पढ़ाता है जिसकी वह दिन रात सेवा करता है।[गप]

गुरु और शिष्य का सम्बन्ध

समाज में गुरु और शिष्य का नाता अत्यन्त घनिष्ठ था। शिष्य का यह कर्त्तव्य था कि वह गुरु की 'दिन–रात सेवा' करे और गुरु का यह कर्त्तव्य था कि वह स्नेहपूर्वक शिष्य से पुत्रवत् मोह करे तथा उसकी समस्त जिज्ञासाओं का समाधान करे।[गपप] किसी भी अध्यापक के लिए यह उचित नहीं था कि वह किसी विद्यार्थी को अपेक्षित ज्ञान से वंचित रखे। विद्या अध्यापक की सम्पत्ति न मानकर धरोहर मानी जाती थी।[गपपप] किन्तु लक्ष्मीधर राष्ट्रीयता को महत्त्व देते हुए कहता है कि जो अध्यापक देश का शत्रु हो उससे विद्यार्थियों को सम्पर्क नहीं रखना चाहिए।[गपअ]

पूर्वमध्यकालीन साहित्यिक स्त्रोतों से तत्कालीन शिक्षा के स्वरूप की सम्यक जानकारी प्राप्त होती है। इस काल में वेदों का अध्ययन पहले की ही तरह किया जाता था। अलबीरूनी के अनुसार देश के अध्येता वेद का अध्ययन करके सोल्लास वैदिक यज्ञ करते थे।[गअ] वेदाध्ययन के सम्बन्ध में अलबीरूनी द्वारा किया गया उल्लेख सही है। पूर्वमध्ययुगीन लेखकों मेधातिथि[गअप], विश्वरूप[गअपप], अपरार्क[गअपपप] आदि के अनुसार छात्रों को गुरु के सान्निध्य में रहकर वेद का वास्तविक ज्ञान और धर्म की समस्त धाराओं को समझना चाहिए। लक्ष्मीधर बृहस्पति को उद्धृत करते हुए लिखता है कि ब्राह्मणों का पहला कर्तव्य है कि वे वेद पढ़े तदनन्तर 'स्मृति और सदाचार'।[गपग]

प्राचीन काल से ब्राह्मणों को ही वेद पढ़ाने का अधिकार था। अलबीरूनी के अनुसार ब्राह्मण वर्ण का व्यक्ति ही वेद पढ़ सकता था, और किसी वर्ण का नहीं।[गग] केवल ब्राह्मण और क्षत्रिय वेद का अध्ययन कर सकते थे, और अन्य कोई वर्ण

www.ignited.in

नहीं।[गगप] पूर्व मध्यकालीन लेखक लक्ष्मीधर के अनुसार ब्राह्मण वेद की शिक्षा देता था।[गगपप] स्मृतिचन्द्रिका[गगपपप] और कृत्यकल्पतरु[गगपअ] के अनुसार एक वेद का अध्ययन करना ही यथेष्ट था, जो बारह वर्ष के लिए उपयुक्त था। लक्ष्मीधर[गगअ] ने जीवनपर्यन्त छात्र रहने वाले नैषधीक ब्रह्मचारी का उल्लेख किया है ।

जो लोग वेद को पूरी तरह नहीं पढ़ सकते थे, उन लोगों के लिए हलायुध ने 400 मन्त्रों को इकट्ठा कर 'ब्राह्मण सर्वस्व' लिखा। उसने अपनी रचना के विषय में लिखा है कि वाजसनेयी, राढ़ीय और वारेन्द्र ब्राह्मणों के लिए इसकी रचना की गई है।[गगअप] यह निश्चित है कि वेदों के कुछ अंश ही छात्रों को याद होते थे।

समय के प्रवाह में सम्पूर्ण वेदों का अध्ययन–क्रम मन्द पड़ने लगा था। ग्यारहवीं–बारहवीं सदी के इन उल्लेखों से यह पूर्णतः स्पष्ट है कि सभी ब्राह्मण वेदों में पारगंत नहीं होते थे। किन्तु सातवीं सदी के बाण के उल्लेख से विदित होता है कि उसने खड्ग सहित वेदों का सम्यक् अध्ययन किया था।[गगअपप] ह्वेनसांग[गगअपपप] का भी यही कथन है कि ब्राह्मण चारों वेदों का अध्ययन करते थे।

वेद का पाठ : मौखिक

वेद का ज्ञान स्मरण–शक्ति पर ही आधारित था। इसकी शिक्षा मौखिक ही दी जाती थी। अलबीरुनी लिखता है कि भारतीय वेद को लिखने की स्वीकृति नहीं देते। क्योंकि यह स्वर के निश्चित् उतार–चढाव पर विवृत किया गया है। लेखनी का प्रयोग वे इस कारण उपेक्षित करते हैं कि कुछ त्रुटियाँ न हो जाये और लिखे गए पाठ में कुछ कमी न रह जाए। परिणाम यह हुआ कि अनेक बार वे वेद को भूले और कई बार उन्होंने वेद गंवाए।[गगपग]

बारहवीं सदी तक वेद के मौखिक पाठ का प्रचलन था।[गगग] किन्तु अलबीरूनी वेद के लिपिबद्ध होने का उल्लेख करता है। कश्मीरवासी प्रसिद्ध ब्राह्मण वसुक्र ने अपनी इच्छा से वेद को लिखने और व्याख्या करने का कार्य आरम्भ किया। यह ऐसा कार्य था जिसे करने से प्रत्येक व्यक्ति परहेज करता था। लेकिन उसने इन्हें पूर्णतः लिपिबद्ध किया। उसे भय था कि लोग वेद भूल न जाये और पूर्णतः मनुष्य की स्मृति से निकल न जायें क्योंकि उसने परखा कि लोगों के चरित्र गिरते गए और उन्होने न सद्धर्म पर ध्यान दिया न कर्म पर।[गगगप]

वेदाध्ययन का स्थान

शास्त्रीय नियमानुसार, वेदाध्ययन घर से बाहर उन्मुख वातावरण में ही किया जाता था। इसीलिए गुरु और शिष्य नगर और ग्राम से दूर एकान्त स्थान में निवास करते थे। गुरु के आवास को 'गुरुकुल' कहा जाता था। विद्याध्ययन का यही निर्जन स्थल ब्रह्मचर्य–आश्रम था। अलबीरुनी लिखता है कि वेद में कुछ ऐसे अंश है जिनका वर्णन लोगों के बीच नहीं होना चाहिए। वे आशंका करते है कि कहीं यह औरत और भैंस के गर्भपात का कारण न बन जाये। अतः वे इसका वर्णन करते समय बाहर खुले मैदान में चले जाते हैं। इस तरह मुश्किल से एकाध श्लोक ही हैं जो ऐसे प्रमुख आदेश से अलग हों।[गगगपप] लक्ष्मीधर के अनुसार वेद न सड़क पर, न नगर में पढ़ा जाना चाहिए और न शूद्र के सम्मुख, न असभ्य के, बल्कि खुली जगहों पर पढ़ा जाना चाहिए।[गगगपपप]

'गुरुकुल' में निवास करके विद्याध्ययन की प्रणाली प्राचीनतम है। 7 वीं सदी के बाण के उल्लेख से विदित होता है कि गुरुकुल में अध्ययन की विधि पूर्ववत चली आ रही थी। बाण ने स्वयं गुरुगृह में शिक्षा प्राप्त की थी।[गगगपअ]

वेद अध्येताओं के विषय में अलबीरुनी लिखता है कि ब्राह्मण लोग बिना अर्थ समझे ही इसका (वेद का) पाठ करते हैं। वे इसी प्रकार इसे कण्ठस्थ कर लेते हैं, एक से सुनकर दूसरा स्मरण कर लेता है। ब्राह्मणों में वेद का अर्थ जानने वाले बहुत कम हैं। उन लोगों की संख्या तो और भी कम है जिनकी विद्वत्ता ऐसी हो जो वेद के विषयों और उसकी व्याख्या पर धार्मिक विवाद कर सकें।[गगगअ]

अन्य विषयों का अध्ययन

बाण के अनुसार ब्राह्मण गुरु नियमित रूप से वेद, व्याकरण, मीमांस आदि की शिक्षा देता था। गुरुकुल में वेदों का निरन्तर पाठ होता था। यज्ञ की अग्नि जलाती थी। अग्निहोत्र की क्रियाएं होती थीं और विश्वदेव की बलि दी जाती थी। विधिपूर्वक यज्ञ का सम्पादन होता था तथा ब्राह्मण उपाध्याय ब्रह्मचारियों को पढ़ाने में संलग्न रहते थे।[गगगअप]

ज्योतिष, गणित, भूगोल, रसायन, भौतिक, दर्शन, नीति, इतिहास, साहित्य संस्कृत आदि अनेकानेक विषयों का भारत में असीम भण्डार रहा है। इन विभिन्न विषयों पर प्राचीनकाल में विपुल ग्रन्थों का प्रणयन होता रहा है। सभी विषयों पर इतनी प्रचुर सामग्री थी कि जिनका अध्ययन कर पाना सम्भव नहीं था। अलबीरूनी लिखता है, 'विज्ञान और साहित्य की अन्य अनेक शाखाओं का विस्तार हिन्दू करते हैं तथा उनका साहित्य सामान्यतः अपरिसीम है।[गगगअपप]

निश्चय ही किसी एक व्यक्ति के लिए विभिन्न विषयों के समस्त ग्रन्थों का ज्ञान प्राप्त कर पाना अत्यन्त दुष्कर है।

अलबीरूनी ने चार वेदों, अठारह, पुराणों, बीस स्मृतियों, महाभारत, गौड़कृत ग्रन्थ, पतजंलिकृत ग्रन्थ, कपिलकृत न्यायभाषा, जैमिनीकृत मीमांसा, बृहस्पतिकृत लोकायत, आगस्त्यकृत अगस्तमत, शर्ववर्मनकृत का तन्त्र, शशिदेववृत्त, उग्रभूतिकृतं शिष्यहितावृत्ति, पुलिश का गणित विषयक सिद्धान्त, वराह मिहिर, आर्यभट्ट वशिष्ट आदि के विभिन्न विषयगत मतों और ग्रन्थों का उल्लेख किया है जिससे यह स्पष्ट होता है कि उस समय अनेकानेक विषयों पर भारतीय ग्रन्थ थे जिनका अध्ययन भारत में ही नहीं, बल्कि विदेशों में भी होता था।

अलबीरूनी से चार सौ वर्ष पहले, सातवीं सदी के पूर्वी चालुक्यों के एक दान अभिलेख से विदित होता है कि भेंट पाने वाले व्यक्ति का पितामह जो स्थानीय विद्यालय का प्राध्यापक था, वह दो वेदों में पारंगत तथा पद, क्रम, अनुक्रमणिका, कल्प, उपनिषद, पुराण, इतिहास और धर्मशास्त्र का ज्ञाता था। भेंट पाने वाला स्वयं या कराने में निपुण तथा उपनिषद्, इतिहास, पुराण और धर्मशास्त्र में दक्ष था।[गगगअपपप]

पूर्वमध्यकालीन भारत में वेदों के अतिरिक्त, धर्मशास्त्र, पुराण, ज्योतिष, व्याकरण, विज्ञान, भौतिक और रसायन आदि का भी अध्ययन किया जाता था। जैनेन्द्र कृततन्त्र और हेमचन्द्र के व्याकरण के नवीन समुदाय भी थे।[गगगपग] आश्वलायन[गस], वाजसनेय[गसप], छान्दोग्य[गसपप], सांख्य[गसपपप] आदि की अपनी

www.ignited.in

अलग–अलग शाखा थी। स्वयं अलबीरुनी ने अपनी कृति में स्थान–स्थान पर विभिन्न भारतीय विषयों की पुस्तकों से अनेक उद्धरण दिए हैं, जिनसे स्पष्ट होता है कि उस काल में अनेक भारतीय विषयों की शिक्षा दी जाती थी। मीमांसा, सांख्य, न्याय, चार्वाक सिद्धान्त आदि दर्शन शास्त्रों का अध्ययन किया जाता था।[गसपअ]

हिन्दू–गणित की विशेषता पर लिखते हुए अलबीरुनी का यह कथन है, अंकों के व्यवहार में जो सहस्त्र से आगे जाते हैं, वे हिन्दू ही हैं, कम से कम अपनी गणित की विशेष परिभाषाओं में। ये (परिभाषाएं) या तो उन्होनें स्वतन्त्र रूप से विकसित की है या निश्चित व्युत्पत्तियों के अनुसार निकाली हैं, जब कि दोनों तरीके मिलाकर बने हैं।[गसअ]

व्याकरण

पूर्वमध्यकालीन शिक्षा में व्याकरण का भी बहुत प्रचार था। भारत में व्याकरण के अनेक विद्वान् हो चुके थे, जिन्होने व्याकरण पर ग्रन्थ–रचना की थी। शाक्ट, पाणिनी, शर्ववर्मन, शशिदेव आदि अनेक विचारकों ने व्याकरण पर बहुचर्चित ग्रन्थों का लेखन किया था। इत्सिंग के विवरण से विदित होता है कि काशिकावृति और पतजंलि के महाभाष्य का अध्ययन चार अथवा छह साल में पूर्ण होता था।[गसअप] अलबीरूनी ने व्याकरणाचार्य उग्रभूति का उल्लेख भी किया है।[गसअपप] वह पंजाब के शाहिय शासक आनन्दपाल का गुरु और व्याकरण ग्रन्थ 'शिष्यहितावृति' का रचनाकार था। उग्रभूति की पुस्तक और उसके प्रचार–प्रसार के विषय में अलबीरुनी लिखता है, 'ग्रन्थ पूर्ण कर लेने के बाद उसने उसे कश्मीर भेजा, लेकिन घमण्डी और परिवर्तन विरोधी होने के कारण वहाँ के लोगों ने इसे नहीं अपनाया। अतः उसने इसकी शिकायत शाह से की, और शाह ने गुरु के प्रति शिष्य के कर्तव्य को आचरित करते हुए, उसकी इच्छा को पूर्ण करने का वचन दिया। अतः उसने 20000 दिरहम तथा इतने ही मूल्य के उपहार कश्मीर के उन लोगों में बाँट देने की आज्ञा दी जो उसके गुरु की पुस्तक पढ़ते थे। परिणामस्वरूप ग्रंथ पढ़ने वालों की भीड़ लग गई जैसी अन्य किसी व्याकरण की प्रतिलिपि पर नहीं हुई। लेकिन यह उनमें एक लालच की आधारशिला थी। ग्रन्थ प्रचारित और अत्यन्त पुरस्कृत हुआ।[गसअपपप] विदेशियों के लिए भारतीय व्याकरण सीख पाना अत्यन्त कठिन था। अलबीरुनी ही कहता है, 'हम मुसलमान इससे कुछ नहीं सीख सकते इसलिए कि यह ऐसे मूल से निकली शाखा है जो हमारी समझ के अन्तर्गत नहीं–मेरा तात्पर्य अपनी भाषा से है।'[गसपग]

रसायन विद्या का वर्णन करते हुए अलबीरुनी ने प्रसिद्ध रसायनशास्त्री नागार्जुन का उल्लेख किया है। वह लिखता है, 'नागार्जुन इस कला (रसायन विद्या) का विख्यात विद्वान था। यह सोमनाथ के निकट देहककोट का निवासी था। वह इस विद्या में पारगंत था और उसने एक ग्रन्थ की रचना की थी, जिसमें इस विषय पर लिखे गए समस्त साहित्य का सार है। यह पुस्तक अत्यन्त दुर्लभ है। वह हमारे समय से कोई एक सौ वर्ष पहले हुआ था।[स]

पूर्वमध्यकालीन भारत में दार्शनिक ग्रन्थों का अध्ययन भी रुचिपूर्वक किया जाता था।[सप] भोज का 'राजमार्तण्ड', 'भीमपराक्रम', 'भुजबल निबन्ध', सोमेश्वर का मानसोल्लास तथा भवदेवी के ग्रन्थों का लेखन इसी काल में हुआ। विज्ञानेश्वर, अपरार्क, कुल्लूक और गोबिन्दराज की स्मृतियों और धर्मशास्त्रों पर टीकाएँ, इसी युग में लिखी गई। लक्ष्मीधर ने 'कृत्यकल्पतरु', वल्लालसेन ने 'आचारसागर', दानसागर, अद्भुतसागर, वरदराज ने 'व्यवहारनिर्णय', देवणभट्ट ने 'स्मृतिचन्द्रिका', हेमाद्रि ने 'चतुर्वर्गचिन्तामणि, और जीमूतवाहन ने 'दायभाग नियम' इसी पूर्व मध्ययुग में लिखा। भोज ने खगोल विद्या पर 'राजमृगांक' और शतानन्द ने 11वीं सदी में 'भासवती' लिखा। उज्जयिनी में ऊबट ने वाजसनेयी संहिता पर अपनी प्रसिद्ध टीका की रचना राजा भोज के काल में ही की थी।

शिक्षा और विद्या के प्रमुख केन्द्र

प्राचीनकाल से तक्षशिला, नालन्दा, विक्रमशिला, वाराणसी आदि नगर विद्या के प्रधान केन्द्र थे। पाली साहित्य में तक्षशिला का उल्लेख विद्या और संस्कृति के प्रधान केन्द्र के रूप में हुआ है।[सपप] तक्षशिला के बाद वाराणसी शिक्षा का प्रमुख केन्द्र था जहाँ दूर–दूर से विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करने के निमित्त आते थें। पूर्वमध्यकाल में जब मुसलमानों ने पंजाब को तहस–नहस करके इसे अपने अधीन कर लिया तब वहाँ के विद्वान् और शिक्षाविद् निवास के निमित्त दूसरे प्रमुख नगरों में प्रस्थान कर गए। कुछ तो पंजाब के निकट काश्मीर में बस गए और कुछ वाराणसी जैसे सुदुर विद्या केन्द्रों में चले गए। अलबीरुनी लिखता है कि हिन्दू विद्याएँ हमारे विजित प्रदेशों से भागकर काश्मीर, वाराणसी जैसे सुदुर स्थानों में चली गई और जहाँ मेरे हाथ नहीं पहुँच सकते।[सपपप] लेकिन वाराणसी तो बहुत पहले से विद्या और शिक्षा का प्रधान केन्द्र था। पूर्वमध्ययुगीन अभिलेखों से विदित होता है कि वाराणसी, गया और नागर तीर्थ में वेद आदि का अध्ययन होता था। वाराणसी और काश्मीर में अनेक उच्चतम विद्यालय थे जहाँ अनेकानेक विषयों की शिक्षा दी जाती थी। अलबीरुनी लिखता है कि यह नगर (वाराणसी) और काश्मीर हिन्दू विद्याओं के श्रेष्ठतम विद्यालय हैं।[सपअ]

पूर्वमध्यकालीन काश्मीर में दर्शन, साहित्य, न्याय, ज्योतिष, इतिहास आदि के प्रतिभा सम्पन्न विद्वान् हुए जिन्होने साहित्य और संस्कृति के अनेक ग्रन्थों की रचना की। 'हरिविजय' का रचनाकार रत्नाकार (लगभग 800 ई.) 'शिवांक' का रचयिता शिवस्वामी (858–885ई.) बृहत्कथामंजरी', रामायमंजरी, भारतमंजरी, बोधिसत्वावदान के रचनाकार क्षेमेन्द्र (लगभग 1050ई.), 'कलाविलास, चतुर्वर्गसंग्रह, चारुचर्या, नीतिकल्पतरु, समयमातृका आदि ग्रन्थों के रचयिता (क्षेमेन्द्र का पुत्र) सोमेन्द्र, अलंकार शास्त्र के आचार्य रुंयक (लगभग 1130ई.), 'राजतरंगिणी' के लेखक एवं इतिहासज्ञ कल्हण (लगभग 1150 ई.), 'श्रीकण्ठचरित' के रचयिता मंखक (1170 ई.) वेदान्त ग्रन्थ 'खण्डनखण्डखाद्य' महाकाव्य नैषधीयचरित के रचयिता दार्शनिक महाकवि श्रीहर्ष आदि कश्मीर के ही थे। वाराणसी गहडवालों की दूसरी राजधानी के रूप में थी। कश्मीर के प्रसिद्ध कवि श्रीहर्ष के पिता 'हीर' गहड़वाल शासक विजयचन्द्र के सभासद थे। श्रीहर्ष ने विख्यात काव्य नैषधीचरित् की रचना काशी–आवास में ही की थी।

काश्मीर और वाराणसी के अतिरिक्त कन्नौज, उज्जैन, धारा, मथुरा, नदिया नगर आदि विद्या और संस्कृति के प्रमुख केन्द्र थे। परमारों की राजधानी धारा नगरी पूर्व मध्य काल में शिक्षा और विभिन्न विद्याओं के लिए विख्यात था। भोजराज के पिता सिन्धुराज के काल में 1005 ई. के लगभग ऐतिहासिक

महाकाव्य 'नवसाहसांकचरित' का रचियता पद्यगुप्त परिमल प्रसिद्ध लेखक हुआ। राजा भोज स्वयं साहित्यनुरागी था। धारा नगरी में उसने संस्कृत विश्वविद्यालय की स्थापना की तथा स्वयं भी अनेक ग्रन्थों की रचना की। उसकी सभा अनेक विद्वानों से सुशोभित थी। कवि धनपाल और सूक्तियों के संग्रहकर्ता चित्तप उसके समकालीन थे।

मथुरा के निकट भदावर के डल्हण तथा बंगाल के नयपाल के राजवैद्य चक्रपाणि, दोनों ने चरकसंहिता पर टीकाएँ लिखीं। बंगाल के सेन राजाओं के नेतृत्व में नदियां (नवद्वीप) नगर विद्या और साहित्य का प्रसिद्ध केन्द्र बन गया। हलायुध, जयदेव, धोयी, उमापति आदि श्रेष्ठ कवि–विद्वानों ने अपनी अलौकिक प्रतिभा के तेज से इस नगर को प्रकाशित किया।[सअ]

संक्षेप में, पूर्वमध्यकालीन भारत में शिक्षा एवं शिक्षाकेन्द्रों की समुचित व्यवस्था थी।

सन्दर्भ

1. अपरार्क, याज्ञवल्क्यस्मृति पर भाष्य, आनन्दाश्रम संस्कृत सिरीज, पूना, 1903–04, पृ. 30–31
2. देवणभट्ट, स्मृतिचन्द्रिका, खण्ड एक, (सम्पा.), एल.श्री निवासाचार्य, मैसूर, 1914–21, पृ. 26
3. संस्कार प्रकाश, वीरमित्रोदय का अंश, चौखम्भा संस्कृत सिरीज, वाराणसी, पृ. 221–225
4. गोपीनाथ, संस्कार रत्नमाला, आनन्दकम प्रैस, बम्बई, 1926, पृ. 904–07
5. अलबीरूनी, अलबीरूनीज इण्डिया, (सम्पा.) सखाऊ, खण्ड दो, लंदन, 1910, पृ. 130
6. टी.वाटर्स, ऑन युआन च्वांग्स ट्रैवल्स इन इण्डिया, खण्ड एक, लंदन, 1905, पृ. 155
7. इत्सिंग, रिकार्डस ऑफ दी बुद्धिस्ट रिलीजन, (सम्पा), तकाकुसु, ऑक्सफोर्ड, 1896, पृ. 165
8. अलबीरूनी, पूर्वोक्त, खण्ड एक, पृ. 182
9. छादोग्य उपनिषद, 7.1.2, 1.4.7, विष्णुपुराण, 39.1
10. देवणभट्ट, स्मृतिचन्द्रिका, खण्ड दो, पृ. 195
11. अलबीरूनी, पूवोक्त, खण्ड दो, पृ. 182
12. लक्ष्मीधर, कृत्यकल्पतरू, ब्रह्मचारी काण्ड, पृ. 199–201
13. वही, पृ. 240
14. वही, पृ 242
15. अलबीरूनी, अलबीरूनीज इण्डिया, खण्ड एक, पृ. 41
16. मेधातिथि, मनुस्मृति, 3.1
17. विश्वरूप, याज्ञवल्क्य स्मृति, 1.51
18. अपरार्क., पृ. 74–75, मेधातिथि, मनुस्मृति, 3.19
19. लक्ष्मीधर, कृत्यकल्पतरू, ब्रह्मचारीकाण्ड., पृ. 266–67
20. अलबीरूनी, पूर्वोक्त, खण्ड दो, पृ. 136
21. वही
22. लक्ष्मीधर, कृत्यकल्पतरू, ब्रह्मचारीकाण्ड., पृ. 252
23. देवणभट्ट, स्मृतिचन्द्रिका, भाग– 1, पृ. 29
24. लक्ष्मीधर, कृत्यकल्पतरू, ब्रह्मचारीकाण्ड., पृ. 263
25. वही., पृ. 271–74
26. हलायुध, ब्राह्मण सर्वस्व, (सम्पा.), तेजश्चन्द्र विद्यानन्द कलकत्ता, 1924, पृ. 38
27. बाणभट्ट, हर्ष चरित, (अनु.) कावेल एण्ड टॉमस., 1897 पृ. 123
28. थामस वाटर्स, पूर्वोक्त, खण्ड एक., पृ. 155
29. अलबीरूनी, पूर्वोक्त, खण्ड एक, पृ. 125–26
30. लक्ष्मीधर, कृत्यकल्पतरू, दानकाण्ड, पृ. 207, 213
31. अलबीरूनी, पूर्वोक्त, खण्ड एक, पृ. 126–27
32. वही
33. लक्ष्मीधर, कृत्यकल्पतरू, दानकाण्ड, पृ. 257–59
34. बाणभट्ट, हर्षचरित, अनु. कावेल एण्ड टॉमस, पृ. 66
35. अलबीरूनी, पूर्वोक्त खण्ड एक, पृ. 135
36. बाणभट्ट, हर्षचरित, पृ. 130
37. अलबीरूनी, पूर्वोक्त, खण्ड एक, पृ. 159
38. एनुअल रिपोर्ट ऑफ साऊथ इण्डियन एप्पिग्राफी, 1927, पृ. 115
39. आर.सी.मजूमदार, सम्पा., दी स्ट्रगल पफार एम्पायर, 1957, पृ. 319–20
40. एप्पिग्रापिफया इण्डिका, टप्प् पृ. 154
41. वही, टप्प् पृ. 18, 19
42. वही, ग्टप्प् पृ. 12, 13
43. वही, टप्प्ए पृ. 154

www.ignited.in

44. वही, पृ. 51

45. अलबीरूनी, पूर्वोक्त, खण्ड एक, पृ. 174

46. ए.एस.अल्तेकर, एजूकेशन इन एशियन्ट इण्डिया, पृ. 133

47. अलबीरूनी, पूर्वोक्त, खण्ड एक, पृ. 135

48. अलबीरूनी, पूर्वोक्त, खण्ड एक, पृ. 136

49. वही, पृ. 135

50. वही, पृ. 189

51. एप्पिग्राफिया इण्डिका, एक, पृ. 59

52. आर.फिक., सोशल आर्गनाईजेशन इन नार्थ ईस्ट इण्डिया इन बुद्धाज टाईम, 1920, पृ. 96

53. अलबीरूनी, पूर्वोक्त, खण्ड एक, पृ. 22

54. वही, पृ. 173

55. आर.के.मुकर्जी, एशियन्ट इण्डियन एजूकेशन, पृ. 598–99